सड़कें – भारत का नया स्वरूप

हो रहा अब भारत में, आठों याम सड़क निर्माण।
बढ़ें अब भारतवासी हर ओर यही एक पैगाम।।

पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण, है अच्छी सड़कों का संकल्प।
देश की उन्नति का अब, है यही एक विकल्प।।

उन्नति होगी देश में हर ओर, टिकाउ होंगी सड़कें।
देशवासी पाएं नई मंजिलें, हर ओर आगे पनपें।।

भारत का अब एक ही नारा, अच्छी सड़कों से विकास हमारा।
भारत का अब विकास होगा, 'विश्व' को एक एहसास होगा।।

हर इंजीनियर का प्रयास होगा, गांव–गांव में विकास होगा।
हर भारतवासी में उल्लास होगा, देश का चहुंमुखी विकास होगा।।

आओ सब मिल संकल्प दोहराएं, गुणवत्ता से सड़कें बनाएं।
देश की नई छवि बनाएं, इंजीनियर भी नई मंजिल पाएं।।

टिकाउ सड़कों का संकल्प दोहरायें।
फिर जाएगा हर ओर नया पैगाम।।

हो रहा अब भारत में, आठों याम सड़क निर्माण।
आगे होगें हर ओर भारतवासी, पाएँगें नया मुकाम।।

आर.के धीमान,
निदेशक (पुल एवं सुरंग)
सीमा सड़क संगठन
चौंड़ा मैदान, मिन्टो कोर्ट
शिमला हिमाचल प्रदेश

कल की बात

वो हमारे हम थे उनके, अभी कल की बात है।
बिजली की तरह थे चमके, अभी कल की बात है।।

सितारा बनके जगमगाना, हमें मंजूर नहीं है,
चाँद जैसे हम थे दमके, अभी कल की बात है।।

हुजूर, फिजूल की बातों में, वक्त जाया न करें,
बात–बात में होती है जमके, अभी कल की बात है।।

मुमकिन है कद की तरह दिल भी हो आदमी का,
इक शक्स मिला दोस्त बनके, अभी कल की बात है।।

कुछ शेर अपने मियाँ, रखिए आप संभाल के,
उसने अश्आर कहे जमके, अभी कल की बात है।।

डी. के. राजा घाटचवरे
लेखापाल, 04/6081
कार्यालय महालेखकार छत्तीसगढ़
फाफाडीह, रायपुर (छत्तीसगढ़)

मुम्बई पुणे एक्सप्रेस वे

एक राजमार्ग की आत्मकथा

मैं एक राजमार्ग हूं और सृष्टि के सभी अन्य घटकों की तरह मेरा भी कर्तव्य कर्म पहले से ही निर्धारित है। वस्तुतः देश के आर्थिक विकास का आधार स्तंभ हूं, मैं। जैसे मेरा अवयव विशाल है, वैसे ही मेरी जिम्मेदारी भी विशाल है। हिन्दुस्तान मेरी कर्म भूमि है। इस वजह से मैं गर्वित हूं। लंबे इतिहास का एक मूक साक्षी हूं, मैं। जब मैं एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाता हूं तो अलग–अलग प्रदेशों की विभिन्नता के साथ परिचित होता हूं– अति विस्मय के साथ महसूस करता हूं कि इस देश के राज्यों की संस्कृति भिन्न–भिन्न होने के बावजूद इनमें अभिन्न रूप से एकात्म भाव विद्यमान है। तब मुझे ऐसा लगता है कि मैं अपने आप में पूर्ण हूं। मुझ में कोई कमी नहीं हैं। संपूर्णता का एक मूर्त विग्रह हूं, मैं।

सभी को एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक सही–सलामत पहुँचाना ही मेरी प्राथमिकता है। इस देश की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति का सतत साक्षी हूं, मैं। प्रगति एवं शांति का भी आधार स्तम्भ हूं, मैं। अपनी गोद में मैं आप सभी को शिशुओं की तरह धारण करता हूं। आप सभी का बाधा रहित यातायात हूं। कभी–कभी आप लोगों की निःसंगता मुझे खिन्न कर देती है। आप लोग शायद सोचते होंगे कि मैं संवेदनशील नहीं हूं। लेकिन यह सच नहीं है? क्या आप लोगों ने कभी एक पल के लिए भी मेरा हमदर्द बनने की कोशिश की है? और क्या कभी मेरी जरूरत की और ध्यान दिया है? आप तो कहेंगे कि जरूरत! कैसी जरूरत और किस लिए जरूरत? जरूरत तो हर किसी की होती है? जिंदगी में हर किसी की कोई न कोई अभिलाषा होती है। मेरी अभिलाषा है कि आप सभी को आपकी मंजिल तक सही–सलामत पहुंचाना। आपकी जरूरतें मेरे लिए प्रमुख हैं। इसलिए मेरी अपनी सभी आवश्यकताएं गौण हैं। मुझे अफसोस है कि आप लोग यह बात समझते नहीं। आप सभी भूल जाते हैं कि रिश्ते नाते तभी बन पाते हैं जब दोनों की बराबर की भागीदारी हो। अन्यथा ये रिश्ते–नाते ज्यादा देर तक टिक नहीं पाते हैं।

मैं, प्रगति और सततता का प्रतीक हूं। सहिष्णुता, सेवा आदि मेरे रोम–रोम में बसे हैं। मैं स्वयं एक संपूर्ण इतिहास हूं। कई युगों के उत्थान–पतन का मूक दर्शक हूं मैं। मेरा कई बार निर्माण और पुनर्निर्माण हुआ है और परन्तु अनादि काल से मेरा अस्तित्व किसी न किसी रूप में अवश्य रहा है। इसलिए मैं अक्षय हूँ, आप मुझे नित्य का अंश भी कह सकते हैं।

मेरा तन–मन भी बच्चों की तरह पुलकित होता है। जब आप में से ही कोई मुझे प्यार करता है, तो मेरा मन खुशी से झूम उठता है और मैं आप सभी से अपनापन महसूस करने लगता हूं। आप सभी अलग–अलग स्थान से और भिन्न–भिन्न मार्गों से अपनी यात्रा की शुरुआत करते हो लेकिन नदी जैसे अपनी जलराशि समुद्र में मिला देती है ऐसे ही हे पथिको! मैं भी आपको आपकी रुचि के अनुसार टेढ़े–मेढ़े रास्तों से आपकी मंजिल तक पहुँचा देता हूं। मेरे मन में एक ही उद्देश्य होता है कि– आप अपनी मंजिल पर बिना किसी बाधा के पहुँच जाएं। इसलिए शास्त्र में कहा गया है कि :–

रुपीनां वैचित्रयानुकुटिलनानापथ जूपां।
नृजामेको राम्यस्तमसि पथसमर्पण इव।।

दोनों तरफ पंक्तिबद्ध रूप से दंडायमान वृक्ष समूह मेरे सुख–दुःख के साथी हैं। धूप बारिश सहन करके वे अचल–अटल पहाड़ों जैसे स्थिर रह के अपनी शाखा–प्रशाखा का विस्तार कर अपनी स्निग्ध छाया से मेरे को आच्छादित करे रखते हैं। जब गर्मी की प्रखर धूप अपनी तीक्ष्ण उष्णता से धरती को तपा देती है– तब मैं इन वृक्ष समूहों की विस्तारित शाखा–प्रशाखा में अपने को सुरक्षित महसूस करता हूं। हम दोनों ही

आवेशपूर्ण हो जाते हैं। आप पथिकगण हमारी इस अनोखी आवेगपूर्ण स्थिति को भाँप नहीं पाते हो शायद आप हमारे प्रति संवेदनशील नहीं होते हो।

आप सभी शायद यह सवाल कर सकते हो मेरा सामाजिक योगदान कहां तक है। इसके जबाव में मैं एक छोटी सी कहानी का उल्लेख करना चाहूँगा। एक था शेर। एक दिन की बात है– शिकारी के जाल में फंस जाता है शेर महाराज। उधर चूहा किसी कारण से सिंह महाराज का कृतज्ञ था। अब उसकी एहसान चुकाने को बारी आई। चूहा कूद पड़ा। उसने अपने तीक्ष्ण दातों से शिकारी के जाल को छिन्न–भिन्न कर दिया। सिंह महाराज आसानी से शिकारी के जाल से बाहर आए और अपने प्राण बचा लिए। इसी तरह मैं भी अपने अवयव पर यातायात को सुगम बनाकर देश की प्रगति में योगदान देता हूँ।

क्या आप बता सकते हैं कि किसी देश को विकसित देश कब कहा जाता है ? किसी देश को तभी विकसित देश कहा जाता है, जब उस देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो, सामाजिक समरसता हो और अन्तराष्ट्रीय स्तर पर उसका महत्वपूर्ण स्थान हो। ऐसे स्तर को प्राप्त करने के लिए देना पड़ता है भारी बलिदान। रातों–रात किसी देश को उन्नत नही बनाया जा सकता है। इसके लिए सहनी पड़ती है यातना–देना पड़ता है चरम और परम त्याग।

पथ कभी खत्म नहीं होता, लेकिन पथिक की मंजिल आती रहती है और उसकी यात्रा पूरी होती रहती है। दिन के अंत में जब मैं अकेला हो जाता हूं और तन्हाइयां मुझे घेर लेती हैं तो मैं आत्म–विश्लेषण में जुट जाता हूं। निशा का आवरण गहन से गहनतम होने लगता है और मेरा विशालकाय शरीर और हृदय इस नीरवता में अकेलापन महसूस करता है। मेरे दोनों तरफ जलती स्ट्रीट लाइटें मुझे माला जैसी लगती हैं, जो मेरा अनुभव और स्पर्श करना चाहती हैं। तभी मैं सोचता हूँ कि हम इतने सारे साथियों और परिजनों से घिरे होते हुए भी एक दूसरे से अलग क्यों हैं। मुझे ऐसा लगता है कि जैसे हम रेगिस्तान के बालू की तरह अपना–अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखना चाहते हैं। रेत में बालू होती है पर वह रेत में एक स्वतंत्र इकाई की तरह होती है। उसी तरह अलग जैसे प्रत्येक मनुष्य का जन्म और मृत्यु अलग होती है।

मैं, त्याग और सहिष्णुता की प्रतिमा हूँ और चहुँमुखी विकास का मूर्त्त विग्रह हूँ मैं। सतत सेवा और त्याग मेरा धर्म है। कर्मफल में आसक्ति न होने के कारण मेरा विस्तार आकाश की तरह है। गीता में कहा गया है कि

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन,।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

मुझ पर से एक के बाद एक पथिक गुजरता रहता है। आदि काल से यह नियम रहा है और भविष्य में भी इसमें कोई परिवर्तन होने वाला नहीं है। क्या पता कि चलते–चलते न जाने मेरी आपसे कब मुलाकात हो जाए, क्योंकि मैं राजमार्ग हूँ ना।

एच पी घोषाल,
सहायक,
सड़क परिवहन और राजमार्ग विभाग

लौट आया है शरद

नेहा की चीखों को सुनकर रामनाथ को लगा ये चीखें उसका कलेजा चीर देंगी। नेहा को अस्पताल में दाखिल कराए अब अठारह से ज्यादा घंटे हो गए थे लेकिन बच्चा था कि होने का नाम ही नहीं ले रहा था। हर आधे घंटे के अंतराल पर नेहा को दर्द उठता और उस दर्द की तीव्रता में वह जल बिन मछली की तरह तड़पती। दर्द ज्वार की तरह उठता, भाटे की तरह उतर जाता और हर बार नेहा के गुलाबी चेहरे पर पीलेपन की एक और परत चढ़ जाती।

''डाक्टर साहब! आप आप्रेशन क्यूं नहीं कर देती?'' रामनाथ लेडी डाक्टर संधू के सामने गिड़गिड़ाया। उसे विश्वास था कि यदि आप्रेशन के जरिए बच्चा हो जाए तो बहू दर्द की पीड़ा से निजात पा जाएगी।

'थोड़ा सब्र करो', डाक्टर संधू ने उसे झिड़का– ''पहली डिलीवरी है, थोड़ी परेशानी तो होगी ही।''

डाक्टर की डांट खाकर रामनाथ रुआंसा हो गया। डॉ. संधू उसकी पीड़ा को समझ रही थी। उसके कंधे पर हाथ रखकर बोली, 'शाम तक रुक जाओ यदि फिर भी बच्चा न हुआ तो सात बजे आप्रेशन शुरू कर देंगे।'

रामनाथ ने घड़ी देखी। तीन बज चुके थे। यानी चार घंटे बहू और तड़पेगी। लेकिन वह कर ही क्या सकता है। उसने थके हुए पथिक की तरह लंबी सांस छोड़ी और शांति की तरफ देखा। पता नहीं कहां से वह इतना साहस, इतना धैर्य जुटा पाती है। बहू की चीखें शांति को भी सुनाई दे रही है लेकिन वो छोटे नए नैपकिन, डेटॉल और रूई के बंडल संभालने में व्यस्त है पता नहीं कब नर्स तकाजा कर दे। शांति के इस रूप को देखकर उसे गर्व भी होता है और भय भी। पांच फुट की उसकी हल्की–फुल्की काया में ईश्वर ने पता नही कहां से इतनी मेहनत, चुस्ती और फुर्ती भर दी है। उससे तीन साल ही तो छोटी है शांति, तो अड़तालिस की तो हो ही गई । पर फिर भी सुबह पांच बजे से रात के दस बजे तक कोल्हू के बैल की तरह घर के कामों में जुटी ही रहती है।

नेहा की चीखे बंद हो गई थीं। रामनाथ को वह दिन याद आया जब शांति भी नेहा की तरह तड़पी थी। तब डाक्टर तो क्या नर्स भी दूर–दूर तक म्यस्सर नहीं थी। गांव की कम्मो दाई ही सबसे बड़ी डाक्टर थी। उसने आते ही घर के सब मर्दों को बाहर निकाल दिया और दरवाजे पर अलगनी लगाकर एक चादर टांग दी थी।

'घबराने की कोई बात नहीं', उसने शांति के उभरे हुए पेट को टटोला और घोषणा की थी। लेकिन तब शांति इतना चीख क्यों रही है, रामनाथ सोचता और परेशान होता। उसकी मां और बड़ी बहन जिसे शांति के जापे के लिए वह ससुराल से लिवा कर लाया था। तेजी से कमरे के अंदर–बाहर आ–जा रही थी। बड़ी बहन रामनाथ के परेशान चेहरे पर नजर डालती और मुस्करा देती। रामनाथ को उसकी मुस्कान जहर लगती। शांति की हर तेज कराहट पर रामनाथ के दिल की धड़कन रुकने लगती। वह अपने आपको कोसता। क्यूं इस चक्कर में पड़ा। पता नहीं शांति बचेगी भी या नहीं। जब शांति की चीखे और तेज हो गई तो उसकी तो जान ही निकल गई। मन ही मन उसने हनुमान चालीसा शुरू कर दिया। जितने भी देवी–देवता याद थे सबके नाम का प्रसाद बोला। कान उमेठ कर प्रतिज्ञा की कि अब वह शांति को छुएगा भी नहीं बस इस बार शांति बच जाए।

और शायद इन सबका मिला–जुला असर था कि एक लंबी चीख के बीच छोटे बच्चे का रोना सुनाई दिया। उसके लड़का हुआ था। 'शांति कैसी है' उसने दाई से सबसे पहले पूछा और तभी उसे शगुन दिया था।

'जान बची तो लाखों पाए' जैसा भाव था उस वक्त उसके चेहरे पर।

डिलीवरी रूम से उभरती नेहा की चीख ने उसको फिर इलाहाबाद पुश्तैनी घर से अस्पताल में धकेल दिया। लेकिन क्या करे अब सात बजे तक तो उसे इन चीखों को सहन करना ही होगा।

'शरद'– यही नाम रखा था उसने और शांति ने मिलकर अपने बेटे का। उसकी किलकारियों से घर गूंजता तो रामनाथ का सीना गर्व से फूल जाता। वह नित नए सपने सजाता– बेटे की परवरिश में वह कोई कसर नहीं छोड़ेगा। उसे खूब पढ़ाएगा। जब शरद पढ़–लिख कर नौकरी करने लगेगा तो वह जल्दी ही उसकी शादी कर देगा और फिर वह पोतों के साथ खेलेगा। हुक्का पियेगा और हुक्म चलाएगा। बस इतना ही काफी है– और वह आंखों को बंद कर लेता जिसमें उसे एक बूढ़ा हुक्का पीता हुआ रामनाथ नजर आता जिसे तीन–चार गोल–मटोल शरारती बच्चों ने घेरा हुआ है।

तभी उसे दिल्ली से अंग्रेजी अध्यापक की नौकरी का नियुक्ति पत्र मिला। उसे लगा कि शरद उसके जीवन में समृद्धि का देवदूत बनकर आया है। वह तो यूं ही जब दिल्ली घूमने गया था अपने चाचा के पास तो 'आवश्यकता है' पढ़कर इंटरव्यू दे आया था। हालांकि दिल्ली की चौड़ी सड़कें, सजी हुई दुकानें और गाड़ियों की रेलम–पेल देखकर वह चकाचौंध था और वहीं बसना भी चाहता था। पर 'हमारे ऐसे भाग्य कहां', यह सोचकर उसने लंबी सांस छोड़ी थी। अब नियुक्ति पत्र हाथ में आने पर उसके सामने फिर से दिल्ली की सड़कें और दुकाने घूमने लगी थीं।

पिछली बातें रामनाथ की बंद आखों के सामने चलचित्र की तरह घूम रही थीं। कितनी मुश्किल में उसने और शांति ने मिलकर दिल्ली में अपनी गृहस्थी बसायी थी। पहले किराए का घर, मकान–मालिकों की खिचखिच और फिर दफ्तर के साथियों की सलाह पर दो रुपए गज में लक्ष्मीनगर में प्लॉट खरीदना। शरद का स्कूल में दाखिल करवाना, पेट पर पट्टी बांध कर प्लॉट पर दो कमरे और रसोई बनवाना। कई बार तो उसे लगता वह इस अंधी दौड़ से निकल भागे। लेकिन शांति अपना धैर्य नहीं खोती जब वह दुनिया की ऊंच–नीच रामनाथ को समझाती तो रामनाथ उसका मुंह ताकता। इतनी अक्ल इसे कहां से आ गई है– वह सोचता।

शरद के स्कूल जाने के बाद शांति अकेली पड़ जाती। उसे एक और बच्चे की चाह थी। काफी कोशिशों के बाद भी जब उसके गर्भ में नया फूल नहीं पनपा तो वह उसे लेकर इसी अस्पताल में आया था। डॉ. संधू तब सही कोई बाइस–तेइस वर्ष की होंगी। एम.बी.बी.एस करते ही वह इस हॉस्पिटल में आ गई थीं।

'डिलीवरी' के समय कुछ गड़बड़ी हो जाने से गर्भाशय में बुरी तरह इंफैक्शन फैल चुका है'– डॉ. संधू ने जब बताया तो उसे चक्कर–सा आने लगा था। 'अब इसे जल्द से जल्द निकालना होगा।' खूब रोई थी शांति उस दिन उसके कंधे से लिपट कर। बार–बार कहती 'बंजर हो गई हूं मैं।' आंसू रुकते ही नहीं थे।

'फिक्र मत कर! शेरनी का एक शेर ही काफी है' उसने शांति की पीठ पर हाथ फेरते हुए दिलासा दिया था और शांति की भीगी पलकों को चूम लिया था। शांति भी थोड़ा संभली। रामनाथ ने गौर किया कि अब शांति शरद के खाने–पीने को लेकर ज्यादा चिंतित होने लगी थी।

नेहा की उठती चीख ने फिर विचार क्रम को भ्रंग किया। उसका जी किया कि वह दौड़े और डिलीवरी रूम में घुसकर नेहा के सिर पर हाथ रख दे कह– 'मेरी बच्ची घबरा नहीं। सब ठीक हो जाएगा।' कितनी कुम्हला गई है नेहा इन दो दिनों में।

उसे याद आया वो दिन जब वह शरद के लिए नेहा को देखने गया था। कितना गुलाबी रंग था उसका लगता जैसे

'बार्बी' गुड़िया को साड़ी पहना कर खड़ा कर दिया हो! फर्क इतना था कि बार्बी गुड़िया की तरह उसके बाल भूरे–सुनहले न होकर काले थे जिनसे बनी चोटी उसके नितंबो तक पहुंचती थी। पहली नजर में ही उसे नेहा भा गई थी। लेकिन बेटा अब बड़ा हो गया है। उसकी जिंदगी का सवाल है। फिर इतना बड़ा ऑफिसर भी तो है। उससे पूछना ही पड़ेगा। रामनाथ को पता है उसके बेटे का कहीं कोई प्रेम प्रसंग नहीं है। आज भी उसका बेटा अपने दिन की शुरूआत उसके पैर छूकर करता है लेकिन जब से एम. बी.ए. करने के बाद शरद भेल में 'असिस्टेंट मैनेजर' हुआ है रामनाथ के मन में उसकी इज्जत बढ़ गई है। आखिर उसके कितने ही साथी हैं जिनके बच्चे इंजीनियर और एम.बी.ए करने के बाद भी बेरोजगार हैं। कुछ तो उम्र में शरद से पांच–पांच, सात–सात साल बड़े हैं। बेटा रोजगार से लग गया तो जल्दी शादी करो– इस सिद्धांत को रामनाथ आज भी मानता है।

'जरा पूछो तो शरद को नेहा कैसी लगी।' लड़की वालों के घर से वापस लौटते ही रामनाथ ने शांति से कहा था।

जवाब में शांति मुस्करा दी थी– 'लड़कियों की तरह शरमा रहा है तुम्हारा शेर। कह रहा था मां मुझे तो लड़की पसंद है आगे तुम जानो। फिर कितने चाव से उसने शरद और नेहा की शादी की थी।

'बेटी हम संस्कारों में विश्वास करते हैं लेकिन दिल्ली में बीस वर्ष से रहते हुए इतने एडवांस तो हो ही गए हैं कि तुमसे पर्दा नहीं करवाएंगे। तुम हमारे लिए बहू कम बेटी ज्यादा हो।' उसने नेहा से कहा था और सच है नेहा के लिए रामनाथ पिता था और शांति मां। शरद के साथ नेहा जब मोटर साइकिल पर बैठकर घूमने के लिए निकलती तो उनकी जोड़ी देखते ही बनती। रामनाथ खुद नेहा को बताता फलानी जगह घूमने क्यों नहीं जाते। फलानी जगह कितनी अच्छी है– शांति बनावटी गुस्सा दिखाती 'हमें तो कभी घुमाने ले नहीं गए'। वह उसे समझाता– ''देख बावली! हमारे ऊपर तो कोई था नहीं सारी जवानी पैसे बचाने और मकान बनवाने में निकल गई। अब इनको तो मौज करने दें'' और शांति चुप हो जाती।

फिर टूटा खुदा का कहर। शरद नोएडा में अपने दोस्त से मिलकर लौट रहा था कि ब्लू लाइन बस ने प्रगति मैदान के पास उसकी मोटर साइकिल में टक्कर मार दी। काफी खून निकल गया था उसका। लेकिन वाह री दिल्ली की बेदिली। आधे घंटे तक लड़का सड़क पर पड़ा तड़पता रहा और लोग अफसोस जताते हुए, हाय राम! कहते हुए गुजरते रहे। पहली बार उसका दिल किया दिल्ली को मारे लात और लौट जाए। वहां कान में भी दर्द होता है तो पूरे मोहल्ले को पता चल जाता है। जब तक पुलिस की पी. सी. आर वैन ने उसे अस्पताल पहुंचाया शरद दम तोड़ चुका था। घर का पता भी पुलिस को उसके बटुए में रखे उसके आई कार्ड से मिला।

नेहा तो स्तब्ध रह गई थी। न रोई, न चीखी, न चिल्लाई। एकदम बुत। शांति रोती थी– मेरा शेर! मेरा दीपक और इसके आगे उसका बोल नहीं निकल पाता था। बड़ी मुश्किल से नेहा को औरतों ने जबरन रूलाया था। कहीं सदमा न बैठ जाए। आखिर साल भर भी शादी को पूरा नहीं हुआ था और विधाता ने विधवा बना दिया। अंतिम संस्कार करके जब रामनाथ घर लौटा तो उसे अपना घर ही बेगाना लगता था। उसे लगता कि वह आर्नेस्ट हेमिग्व के उपन्यास 'ओल्डमैन एंड दासी' का नायक है जो अपने बच्चे को लेकर रोज नए सपने बुनता है। उस मछुआरे बूढ़े नायक का बेटा जवानी की दहलीज पर कदम रखता है। बूढ़ा उसकी शादी और फिर उसके बच्चों का सपना देखता है लेकिन एक दिन क्रुद्ध तूफानी समुद्र की लहरें उसके युवा बेटे को निगल जाती है। बूढ़ा फिर अकेला खड़ा रह जाता है अपने टूटे हुए सपनों के खंडहर पर। नितांत अकेला।

रिश्तेदार वापस चले गए। पड़ोसियों का आना भी कम हो गया। रामनाथ चाहता था नेहा की दूसरी शादी कर दे। उसे बेटी की तरह विदा करे। आखिर अभी उन्नीस साल

की ही तो उम्र है उसकी। जब उसने शांति से इस बात का जिक्र किया तो शांति ऐसे चौंकी जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो।

'क्या कह रहे हो! जानते हो उसके पेट में शरद का बीज पनप रहा है।' अब चौकने की बारी उसकी थी– 'तुमने पहले तो नहीं बताया। मुझे ही अब पता चला है। सिर्फ दो महीने ही तो चढ़े हैं। मैं खुद नेहा की दूसरी शादी करना चाहती हूं लेकिन वह अड़ी है बच्चे के सहारे जिंदगी काटने की जिद पर।'

नेहा के मां–बाप और भाई ने भी उसे समझाया– बच्चा हो जाएगा तो अच्छे लड़के नहीं मिल पाएंगे। लेकिन नेहा ने सबको फटकार दिया।

'यह शरद की निशानी है। मेरे प्यार की निशानी। मैं इसे पैदा करूंगी, पालूंगी। मुझे नहीं करनी शादी।' और सबने थकहार के उसकी जिद के आगे सिर झुका दिया।

इस बार नेहा की चीख बड़ी तेज थी। बरामदे से टहलती हुई शांति भी डिलीवरी रूम के दरवाजे की ओर लपकी। डॉ. संधू भी तेजी से अंदर गई। कितने बाल सफेद हो गए हैं डॉ. संधू के। जिस अस्पताल में उन्होंने इंटर्नशिप की थी आज उसी में महिला रोग विभाग की अध्यक्षा हैं। वैसे उनकी जूनियर डाक्टर्स सारा काम संभालती हैं पर पिछले बीस वर्षों से रामनाथ का उनसे ऐसा भावनात्मक रिश्ता बन गया है। खुद सारा केस देख रही हैं। नेहा की चीखें तेज हो गई थी। शायद दर्द का अंतराल काफी कम हो गया है और फिर तेज चीखों के बीच में बच्चे के रोने की आवाज आई।

'बधाई हो रामनाथ जी। पोता हुआ है।' डॉ. संधू चहकते हुए उसे बधाई दे रही थीं। 'देखो सात बजे का टाइम दिया था और छह पंद्रह पर बच्चा हो गया। कह रहे थे सिजेरियन करो।'

रामनाथ की आंखों में कृतज्ञता के भाव थे। वह दौड़ पड़ा हास्पिटल के स्टाफ में मिठाई बांटने के लिए मिठाई लेने। आज उसका दिल बल्लियों उछल रहा था। फिर शरद लौट आया है। सोच रहा था, बड़ा हो जाएगा तो स्कूल में दाखिल दिलाएगा। फिर शायद नौकरी के लिए सिफारिश ढूंढ़नी पड़े। नौकरी पर लगते ही वह उसकी जल्दी शादी कर देगा। फिर उसके बच्चे होंगे, वह उन्हें खिलाएगा। हुक्का पिएगा और हुक्म चलाएगा।

अनिता अनुराग
हिंदी अधिकारी
भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण
द्वारका, नई दिल्ली।

अंतर्मन

(1)

दो चार ग़ाम राह को हमवार देखना,
फिर हर कदम पे एक नई दीवार देखना।

आंखों की रोशनी से है हर संग आईना,
हर आईने में खुद को गुनहगार देखना।

हर आदमी में होते हैं दस–बीस आदमी,
जिसको भी देखना हो कई बार देखना।

मैदां की हार जीत तो किस्मत की बात है,
टूटी है किसके हाथ में तलवार देखना।

दरिया के उस किनारे सितारे भी फूल भी,
दरिया चढ़ा हुआ हो तो उस पार देखना।

अच्छी नहीं है शहर के रस्तों से दोस्ती,
आँगन में फैल जाये ना बाजार देखना।।

(2)

बदला न अपने आप को जो थे वही रहे,
मिलते रहे सभी से मगर अजनबी रहे।

अपनी तरह सभी को किसी की तलाश थी,
हम जिसके भी करीब रहे दूर ही रहे।

गुजरो जो बाग से तो दुआ मांगते चलो,
जिसमें खिले हैं फूल वो डाली हरी रहे।

दुनिया न जीत पाओ तो हारो न आप को,
थोड़ी बहुत तो जहन में नाराजगी रहे।

हर वक्त हर मुकाम पे हंसना मुहाल है,
रोने के वास्ते भी कोई बेकली रहे।।

(3)

सफ़र को जब भी किसी दास्तान में रखना,
कदम यकीन में मंजिल गुमान में रखना।

जो साथ है वही घर का नसीब है लेकिन,
जो खो गया उसे भी मकान में रखना।

जो देखती हैं निगाहें वही नहीं सब कुछ,
ये अहतियात भी अपने बयान में रखना।

वो एक ख्वाब जो चेहरा कभी नहीं बनता,
बना के चाँद उसे आसमान में रखना।

चमकते चाँद सितारों का क्या भरोसा है,
जमीं की धूल भी अपनी उड़ान में रखना।

सवाल तो बिना मेहनत के हल नहीं होते,
नसीब को भी मगर इम्तहान में रखना।।

मोहम्मद हारून,
अभियंता अधिकारी कार्यालय, रायपुर (छ.ग.)

अफसोस

बुढ़ापे में भगवान का नाम लेना भूल जाते थे, लेकिन दिन भर काशी का नाम बीस बार बुलाने से भी दिन नहीं बीतता था नारायण बाबू का। नारायण बाबू की उम्र 75 साल। स्वाधीनता संग्रामी होने के कारण उनकी बहुत जान पहचान थी। बारह साल का काशी उनके घर का नौकर है। जबसे काशी ने इस घर में पाँव रखा है ऐसा कोई भी दिन नहीं जब परिवार में किसी ना किसी सदस्य के साथ उसकी तू–तू–मैं–मैं न हुई हो। उसके चाल, बात व्यवहार से घर के सभी सदस्य परेशान थे, लेकिन काम काज में वह बहुत काबिल था। घर का या बाहर का कैसा भी काम बताओ पहले थोड़ा झिझकता, लेकिन अन्त में उसको सुचारू रूप से निपटा लेता था, लेकिन खाने पीने, सोने आदि के बारे में वह किसी की कोई बात नहीं सुनता था। किसी से पूछे बगैर जो चाहे खा लेता था, जब नींद आती तो कुछ काम किए बगैर जहां हो सकता सो जाता था। घर के बच्चों की तरह दोपहर को क्रिकेट खेलता था। हर दिन किसी ना किसी की शिकायत उसके नाम पर आती थी। आज किसी को पीटा है तो कल किसी की कमीज फाड दी है तो किसी का बॉल चुराया है। बंधु, कुटुम्ब जिसके भी घर जाता था उधर कुछ न कुछ हंगामा मचाकर आता था। काशी बिन माँ–बाप का लड़का है। उसका एक दूर का रिस्तेदार उसकी देख भाल करता था, लेकिन जिस दिन से काशी काम काज के लायक हो गया है वह उसके लिए रोजगार बन गया है। काशी उम्र में छोटा है लेकिन वह जान गया है कि काम और भगवान के सिवा दूसरा कोई उसे बचा नहीं पाएगा। लेकिन उसके चाल चलन को परिवार का कोई भी सदस्य पसंद नही करता। सभी उससे रिहाई चाहते थे सिवाय नारायण बाबू के। क्योंकि उन्हे पता था काशी के चले जाने पर उसे एक गिलास पानी भी समय पर मयस्सर नहीं होगा। बीबी, बहू, पोता, पोती सब घर में मौजूद हैं लेकिन किसी को किसी की परवाह नहीं है। परिवार में एक ही आदमी काम का है, और वो है काशी। लेकिन काम–काज के बीच काशी अपना हक जताने से कभी पीछे नहीं हटता था । नारायण बाबू के पोता पोती जो कुछ भी खाते है वह उस पर हठकर बैठता था, नहीं तो रूठ जाता था।

नारायण बाबू सब देख के भी अनदेखी और सब सुनकर भी अनसुनी कर देते थे। क्योंकि नारायण बाबू को पता था कि काशी 14 साल से कम उम्र का लडका है। उसे घर का नौकर रखने पर उन्हें सरकार के नियम के मुताबिक दण्ड भुगतान पड़ेगा। इसलिए नारायण बाबू ने परिवार के हर सदस्य की नाराजगी तथा शिशु संबंधी नियम को ध्यान में रखते हुए काशी को काम से छुटकारा दिलाने का निर्णय ले लिया। लेकिन दुःख की बात यह थी कि काशी अनाथ था, उसे निकाल देने के बाद वह कहां जाके सर छुपाएगा? जहाँ भी जाएगा वही उसकी कोमल मति का शोषण ही होगा। फिर भी उसे किसी तरह जीना तो पड़ेगा चाहे उसकी मेहनत के पसीने की एक–एक बूंद क्यों न निशेष हो जाए, क्योंकि काशी के लिए लड़ने वाला कोई नहीं। तो इससे अच्छा है नारायण बाबू के घर पर ठहर जाना।

यह सोचकर एक दिन नारायण बाबू ने उसे अपने पास बुलाया और पूछा ''तुम तो अच्छा काम करते हो, लेकिन इतना नटखट क्यों बनते हो? अपनी स्थिति के बारे में कुछ सोच रहे हो क्या? तुम बिन माँ–बाप के लड़के हो, यहां से चले जाने के बाद तुम बहुत पछताओगे। सभी तुमसे छुटकारा पाना चाहेंगे।'' काशी ने बोला ''मैने कुछ नटखट नहीं किया है। जो उचित है वही कर रहा हूं। क्या मैं तुम्हारा नौकर हूं। इसलिए पेट भर नहीं खाऊंगा। खाने सोने, खेलने आदि के लिए तुम लोगों को जितना हक है, उतना ही हक मुझे भी है। आप लोग मुझे बहुत कम तनख्वाह दे रहे हो। फिर काम काज के बिना मैं खाना नहीं

खाता हूं। तुम लोग अय्याशी में जी रहे हो और मैं अपनी मेहनत पर जी रहा हूं। आप लोग मुझे दोषी क्यों ठहरा रहे हो?''स्वाधीनता संग्रामी नारायण बाबू के मन को ये बात सचमुच भा गई। काशी अनपढ़, गवार है, फिर भी उसके दिल में स्वाधीन चेतना की कमी नहीं। डर के मारे अपना हक जताने के लिए वह पीछे नहीं हटता। अगर यही चेतना आज सभी के अंदर पैदा होती तो स्वाधीन भारत का मतलब सफल हो जाता। घर के सभी सदस्य नारायण बाबू का विरोध करते थे क्योंकि उन्होंने नौकर को घर से निकालने की बजाए उसे सर पर चढ़ा रखा था। नारायण बाबू सबको समझा बुझाकर काम चला लेते थे, लेकिन एक दिन परिवार के दबाव में आकर उन्होंने काशी को घर से निकाल दिया। हमारे स्वाधीन भारत में काशी जैसे नौकरों की कमी नहीं है। जो अपना हक जताते है, लेकिन आखिर में हार जाते है, क्योंकि यहां नारायण बाबू जैसा मालिक है जो स्वाधीनता और हक को समझते हैं लेकिन अपने आदर्श पर टिक नहीं सकते हैं। दबाव में आकर अन्याय का साथ देते हैं और सच्चाई की निर्मम हत्या करते हैं।

कमला नायक
सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी
ओ.ए.डी.ए, भुवनेश्वर,
कार्यालय प्रधान लेखाकार (सी ए)
ओड़ीशा, भुवनेश्वर

जिज्ञासा

यदि मैं होता किताबी कीड़ा।
नहीं होती, मुझको ये पीड़ा।।

मैं भी होता एक बड़ा अधिकारी।
बड़ी–2 परियोजनाओं का फरमान करता मैं जारी।।

मुझको भी सलाम करते, बड़े–बड़े व्यापारी।
मेरे भी बंगले पर खड़े होते, दो दरबान।।

जो मेरी रक्षा के लिए लूटा देते अपनी जान।
घर में होते ढेर सारे नौकर।।

कोई लाता चाय, कोई लाता कॉफी।
जब डांटता तो सब झुककर कहते।।

गलती हो गई दे दो मुझको माफी।
किन्तु मैंने नहीं की पढ़ाई, मेरी हुई है हार।।

शायद किस्मत ने खाई थी मुझसे खार।
अब मजबूरी में बाजार में बेचता हूँ आलू।।

कोई मुझको कहता है भालू।
कोई चिढ़ाता है कहकर लालू।।

यह सब करता हूँ मैं सहन।
अपने बच्चों की पढ़ाई का भार करता हूँ वहन।।

अब है मेरी यही इच्छा।
मेरे बच्चे पास करें सिविल सर्विसज की परीक्षा।।

जो कार्य मैंने छोड़ दिया अधूरा।
मेरे बच्चे करे उसको पूरा।।

यदि मैं होता किताबी कीड़ा।
नहीं होती मुझको ये पीड़ा।।

श्री सदरे आलम
परियोजना निदेशक का कार्यालय
भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण
हंस राज कॉलोनी, बैरिहवा, गांधी नगर
मालवीया रोड, बस्ती, 272001 (उ0प्र0)